ISSN-2394-2436

श्रीदेवयानः

सत्यमेव जयते नानृतं
सत्येन पन्था विततो
देवयानः ॥

धर्मशास्त्रविभागः

केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः
(प्राक्तनं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्, मानितविश्वविद्यालयः)
भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीनः,
श्रीसदाशिवपरिसरः, पुरी, उत्कलः

२०१९-२०

श्रीदेवयान:

धर्मशास्त्रविभाग:

राष्ट्रियवार्षिकशोधपत्रिका

ANNUAL NATIONAL RESEARCH JOURNAL

2020

सम्पादक:

प्रो. ललितकुमारसाहु:

विभागाध्यक्ष:

सहसम्पादकौ

डॉ. प्रियरञ्जनरथ:

डॉ. सिद्धार्थशंकरदाश:

केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालय:

संसद: अधिनियमेन स्थापित:

(प्राक्तनं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,मानितविश्वविद्यालय:)

भारतसर्वकारस्य मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयाधीन:,

श्रीसदाशिवपरिसर:, पुरी, उत्कला:

ISSN-2394-243[illegible]

श्रीदेवयानः

धर्मशास्त्रविभागीयवार्षिकशोधपत्रिका

DEPARTMENTAL ANNUAL NATIONAL RESEARCH JOURNAL

2020

उपदेष्टा	-	प्रो. खगेश्वरमिश्रः (निद्देशकः)
वरिष्ठाचार्यः	-	प्रो. अतुलकुमारनन्दः
सम्पादकः	-	प्रो. ललितकुमारसाहुः (विभागाध्यक्षः)
सहसम्पादकौ	-	डॉ. प्रियरञ्जनरथः, सहायकाचार्यः डॉ. सिद्धार्थशङ्करदाशः, सहायकाचार्यः
प्रकाशकः	-	धर्मशास्त्रविभागः, केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः श्रीसदाशिवपरिसरः,पुरी, उत्कलाः
सर्वस्वत्वसंग्रक्षणम्	-	पुरीस्थस्य श्रीसदाशिवपरिसरस्य धर्मशास्त्रविभागस्य
सङ्गणकसहायकः	-	श्रीप्रतापकुमारमेकापः
मुद्रणालयः	-	एस्. एस् प्रिण्टर्स, पुरी - २
प्रतिलिपयः	-	२००

विषयानुक्रमणिका

.	'श्रीजगन्नाथसंस्कृतेः प्रचाराय प्रसाराय च मुक्तिचिन्तामणेर्योगदानम्'	प्रो. खगेश्वरमिश्रः	७
.	अजगरयोग	प्रो. ललितकुमारसाहुः	१५
.	श्रीमद्भागवतीय ज्योतिषस्तत्वानुशीलनम्	डा. विश्वरञ्जनपतिः	१७
.	मनुस्मृतौ अन्तःकरणालोचनम्	डॉ. प्रियरञ्जनरथः	२१
.	धमर्थिः	डॉ. सिद्धार्थशङ्करदाशः	२५
	मासनिर्णयः	डॉ. इतिश्री महापात्र	३१
.	आश्रमेषु नित्यभोजनव्यवस्था	डॉ. मनोजकुमारसाहुः	३४
.	निम्बार्कदर्शने ईश्वरतत्त्वम्	डा. नवीनकुमारप्रधानः	३९
.	स्मृतिपुराणागमानुसारं गुरोः महत्वानुशीलनम्	डॉ.कृष्णचन्द्रकविः	४२
०.	साम्प्रतिककाले आसनस्य उपयोगिता	डॉ.सुकान्तिवारिक्	४९
१.	धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा	डॉ. ज्योतिप्रसाददाशः	५४
२.	आधानविचारः	डॉ.नीलमाधवदाशः	५८
३.	श्राद्धतत्त्वस्य सामान्यविवेचनम्	डॉ.श्रीमती शकुन्तलादाशः	६६
४.	विवादपदेषु ऋणादानम्	डॉ. अनिलकुमारदाशः	७२
५.	गुरुकुले ब्रह्मचारीधर्मः	डॉ. शशिभूषणसेनापतिः	७५
६.	दायसारकर्तुः महेशठक्कुरस्यात्मलब्धिः	सोनालिसाहुः	७९
७.	प्राचीनब्रह्मचर्यधर्मस्य साम्प्रतिकब्रह्मचारिधर्मोपरि प्रभावः	शिवशङ्करबेहेरा	८३
८.	स्मृतिशास्त्रेषु कृषिव्यवस्था	मनोजकुमारस्वाइँ	८८
९.	आधुनिकयुगे आचारस्य महत्त्वं लोकव्यवहारश्च	मनीषा पाणिग्राही	९२
०.	उत्कलीयधर्मशास्त्रकारेषु कालिदासचयनिनः महत्त्वम्	विश्वलक्ष्मीविश्वालः	९५
१.	स्मृतितत्त्वसारदिशा प्रायश्चितनिर्णयः	एम.सचिस्	९८
२.	आपस्तम्बोक्तब्रह्मचर्याश्रमे अग्निपरिचरणविधिः	प्रमोद्कुमारसाहुः	९९
३.	दत्तकाशौचम्	अंकित दाधीच	१०३
४.	स्मृतियों एवं भवभूति के नाटकों में वर्णित संस्कार- एक तुलनात्मक दृष्टि	डॉ. हिमांशुशेखर त्रिपाठी	१०७
५	विद्यावारिध्युपाधिप्राप्तविभागीयशोधच्छात्राणां विवरणम्		११७

◆◆◆

स्मृतियों एवं भवभूति के नाटकों में वर्णित संस्कारः एक तुलनात्मक दृष्टि

डा. हिमांशुशेखर त्रिपाठी

सहायक आचार्य

श्री लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ,

नई दिल्ली-110016

1.1 संस्कार - संस्कार मानव शिशु को मानवता का प्रथमोद् बोध कराते हैं। गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त की गयी संस्कार-विधि से मानव का मन एवं आत्मा दोनों ही शुद्ध हो जाते हैं एवं उसके भविष्य की विकासमयी परम्परा का प्रादुर्भाव होता है, यह भारतीय मनीषियों की निर्विरोध धारणा रही है। संस्कार शब्द सम् पूर्वक कृ धातु से घञ् प्रत्यय करके निष्पन्न किया जाता है। विभिन्न स्थलों पर विभिन्न अर्थों में इसका प्रयोग किया जाता है।[1] धर्मशास्त्रों में इसका तात्पर्य विधि विधान एवं धार्मिक क्रिया कलापों से लिया जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि धर्मशास्त्रों में संस्कार धार्मिक आधार पर किये जाने वाले उन अनुष्ठानों से सम्बन्धित हैं जो व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक विकास और शुद्धि के लिये जन्म से मृत्यु तक समयानुसार से सम्पन्न किये जाते हैं।[2]

1.2 स्मृतियों में वर्णित संस्कार - संस्कारो की संख्या के सम्बन्ध में प्रायः धर्मशास्त्रियों में मतैक्य नहीं है। कुछ धर्मशास्त्रों में संस्कारों की संख्या 16 मानी गयी है और कुछ में चालीस संस्कारों का वर्णन किया गया है। गौतम धर्मसूत्र में तो चालीस संस्कारों का विधान मिलता है।[3]

मनुस्मृति में गर्भाधान संस्कार से लेकर अग्नि संस्कार तक का वर्णन मिलता है। याज्ञवल्क्य स्मृति में भी केशान्त संस्कार को छोड़कर मनु द्वारा प्रतिपादित संस्कारों की चर्चा की गयी है। परवर्ती स्मृतियों में सोलह संस्कारों की चर्चा की गयी है[4] पर व्यास स्मृति में सोलह संस्कारों का ही प्रतिपादन किया गया है।[5] गौतम ने अड़तालीस संस्कारों का विवेचन किया है। किन्तु अन्त्येष्टि संस्कार का प्रतिपादन नहीं किया है। उनके मतानुसार अन्त्येष्टि संस्कार अशुभ का द्योतक है इसलिये शायद अन्त्येष्टि संस्कार का विधान नहीं किया है।[6] मनुस्मृतिकार एवं याज्ञवल्क्य के मतानुसार संस्कारों की गणना में अन्त्येष्टि समन्त्र संस्कारों में से एक है।[7]

इस प्रकार धर्मशास्त्रियों ने संस्कारों के सम्बन्ध में अपने अपने मत का प्रतिपादन किया है किन्तु पूर्वापर पर्यालोचना से यह ज्ञात होता है कि संस्कारों में मुख्य रूप से षोडश संस्कार ही अधिक स्मृतिकारों द्वारा मान्य हैं तथा अभी वर्तमान समय में षोडश संस्कारों की महत्ता को ही दिखाया गया है। अतः षोडश संस्कार ही अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। जिन षोडश संस्कारों की मुख्यता एवं महत्ता को कहा गया है वे क्रमानुसार निम्नलिखित हैं

1. गर्भाधान। 2. पुंसवन 3. सीमन्तोन्नयन 4. जात कर्म 5. नाम क्रिया 6. निष्क्रमण

ONLINE ISSN: 2582-0095

Impact Factor : 6.246

Gyanshauryam
International Scientific Refereed Research Journal

website : www.gisrrj.com

Certificate of Publication

Ref : GISRRJ/Certificate/Volume 6/Issue 4/803

15-Jul-2023

This is to certify that the research paper entitled

वैश्विक समस्याओं के निदान में उपनिषदों की उपादेयता

डॉ. हिमांशु शेखर त्रिपाठी

धर्मशास्त्र विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली।

ARTICLE

After review is found suitable and has been published in the Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal(GISRRJ), Volume 6, Issue 4, July-August 2023. [Page No : 41-45]

This Paper can be downloaded from the following GISRRJ website link

https://gisrrj.com/GISRRJ23647

GISRRJ Team wishes all the best for bright future

Peer Reviewed and Refereed International Journal

Editor in Chief
Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal

Associate Editor
GISRRJ

Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 4 | ISSN : 2582-0095

वैश्विक समस्याओं के निदान में उपनिषदों की उपादेयता

डॉ. हिमांशु शेखर त्रिपाठी
धर्मशास्त्र विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली।

Article Info
Volume 6, Issue 4
Page Number : 41-45
Publication Issue :
July-August-2023
Article History
Accepted : 01 July 2023
Published : 15 July 2023

शोधसारांश- भौतिक, सांसारिक सुखों, धन-संपत्तियों का लोभ एवं लालच छोड़कर आध्यात्मिक समृद्धि की कामना प्रत्येक मानव को करनी चाहिए । यदि उपनिषदों द्वारा निरूपित इस 'श्रेय मार्ग' पर मनुष्य चलने लगे तो समस्त विश्व में न केवल आर्थिक अपितु सभी प्रकार के भ्रष्टाचारों का उन्मूलन कर सुख, समृद्धि एवं शांति का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा । इस प्रकार 'यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्' - का स्वप्न चरितार्थ हो सकेगा ।

मुख्य शब्द- भौतिक, सांसारिक, वैश्विक, वेद, उपनिषद, शारीरिक, सुख, समृद्धि शांति।

भारत भूमि अनादिकाल से ही आध्यात्मिकता, परलौकिक सुख, आत्मिक समृद्धि, योग, त्याग, सेवा, अपरिग्रह, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, क्षमा, शांति, सदाचार, तथा आर्थिक शुद्धि पर अत्यधिक बल देती रही है, जिसके ज्वलंत प्रमाण हमारे वेद, उपनिषद, स्मृतियां तथा विविध शास्त्र हैं । इन्हीं मूल्यों की प्रमुखता के कारण हमारा प्राचीन भारतीय समाज अत्यंत व्यवस्थित, संपन्न तथा आदर्श माना जाता था, किंतु विदेशी पाश्चात्य संस्कृति के प्रवेश के साथ नितांत भोगवादी, शारीरिक सुखवादी तथा भौतिकवादी प्रवृत्ति का प्रभाव छा जाने के कारण हम प्राचीन जीवन मूल्यों की उपेक्षा करने लगे हैं और इसी कारण न केवल भारतवर्ष अपितु संपूर्ण विश्व के समक्ष आज कतिपय भयंकर विनाशकारी समस्याएं एवं चुनौतियाँ उत्पन्न हो गई है। इन समस्याओं में सबसे घातक, चिंतनीय एवं विध्वंसकारी है समस्त विश्व में व्याप्त भ्रष्टाचार की समस्या । यह समस्या मात्र किसी देशविशेष, कालविशेष, जातिविशेष या व्यक्तिविशेष तक सीमित ना होकर समस्त मानव समाज के समक्ष एक गंभीर चुनौती के रूप में सुरसा की तरह संपूर्ण विश्व को निगलने के लिए मुंह बाए खड़ी है । विश्व के प्रत्येक चिंतनशील व्यक्ति के लिए यह चिंता का विषय बन गई है।

सौभाग्यवश विश्व में व्याप्त भ्रष्टाचार के निदान हेतु हमारे दूरदृष्टि संपन्न पूर्वजों, ऋषियों तथा शास्त्रकारों ने वेदों, शास्त्रों तथा विभिन्न उपनिषदों में बड़ा गहन मंथन एवं विमर्श कर भ्रष्टाचार के विभिन्न आयामों- आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, चारित्रिक एवं मानसिक भ्रष्टाचारों के मूलभूत कारणों तथा उनके समूल उन्मूलन के लिए मार्गों एवं उपायों का निरूपण बड़ी ही स्पष्टता एवं सरलता के साथ किया है । प्रस्तुत शोध निबंध में विभिन्न भ्रष्टाचारों के निवारण हेतु विभिन्न उपनिषदों में प्रतिपादित विचारों एवं उपायों पर पर्याप्त प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

आज विश्व की सबसे ज्वलंत एवं विनाशकारी समस्या आर्थिक भ्रष्टाचार ही है । घोर भौतिकवादी, सुखवादी और भोगवादी पाश्चात्य सभ्यता के निरंतर बढ़ते प्रभाव तथा आध्यात्मिकता और धार्मिकता के उत्तरोत्तर ह्रास के कारण इन दिनों अर्थ को ही सब कुछ मानकर इसकी प्राप्ति के लिए मानव आज घोर से घोर जघन्य कार्य करने को उद्यत है। इस कारण आज समस्त विश्व में चतुर्दिक आर्थिक भ्रष्टाचार का नग्न नृत्य हो रहा है । भौतिक सुख की कामना में आज का मानव दानव एवं अर्थपिशाच का रूप धारण कर येन-केन-प्रकारेण हत्या, लूट-खसोट,ठगी,हिंसा जैसे घृणित साधनों को अपनाकर अधिक से अधिक संपत्ति अर्जित करना चाहता है ।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

इसके चलते समस्त विश्व में आर्थिक क्षेत्र में घोर अराजकता,भ्रष्टाचार एवं गलाघोट प्रतियोगिता के कारण चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है ।

आर्थिक भ्रष्टाचार की समस्या के समाधान हेतु हमें उपनिषदों की शरण में जाना होगा विभिन्न रूपों में हमारे दोनों ने आर्थिक भ्रष्टाचार के निराकरण हेतु अनेक मार्गो एवं उपायों का प्रतिपादन किया है । उपनिषदों के अनुसार आर्थिक भ्रष्टाचार का मूल कारण है पुरुषार्थ की अवहेलना। आज का मानव मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से प्रथम एवं चतुर्थ अर्थात धर्म एवं मोक्ष की घोर उपेक्षा कर मात्र अर्थ एवं काम के पीछे दौड़ने लगा है। कठोपनिषद के यम नचिकेता संवाद में बड़े स्पष्ट शब्दों में यह व्यावहारिक शिक्षा दी गई है की जीवन का लक्ष्य वित्त या धन ही नहीं है । वित्त साधन है ना कि साध्य । वित्त जीवन को सुखी बनाने का साधन है किंतु वित्त संग्रह को ही जीवन का लक्ष्य बना लेना उसके पतन का कारण है । जीवन का लक्ष्य है- भौतिक सुख नहीं, अपितु आत्मिक आनंद की प्राप्ति । केवल वित्त- संग्रह मनुष्य को लक्ष्य से च्युत कर देता है । इसको ही उपनिषद ने कहा है-

"न वित्तेन तर्पणयोमनुष्य:"[1]

"अमृतत्वस्य तु नाशास्ति वित्तेन"।[2]

हमारे चिंतनशील ऋषियों ने अर्थ पर धर्म द्वारा नियंत्रण रखने का निर्देश उपनिषदों में स्पष्ट रूप से दिया है । उनके अनुसार धर्म- विरोधी अर्थ मानव को भ्रष्टाचार के मार्ग पर प्रेरित करता है, जबकि धर्म सम्मत ,धर्मा- विरुद्ध अर्थ मानव को शांति, सुख एवं कल्याण के मार्ग पर अग्रसर करता है । अर्थात धर्मानुकूल मार्ग से अर्थ उपार्जन करने से ही हमें सच्चे सुख, शांति एवं परम पुरुषार्थ की प्राप्ति हो सकती है ।अतएव धर्मपूर्वक धनार्जन हेतु साधन की शुचिता, पवित्रता एवं वैधानिकता पर हमारे ऋषियों ने प्रबल बल दिया है। ना केवल उपनिषदों बल्कि उनके उत्सवभूत वेदों, स्मृतियों तथा अन्य शास्त्रों ने भी इस ओर संकेत किया है। अथर्ववेद में स्पष्ट कहा गया है-

"एता एनां व्याकरं खिले गा विष्ठिता इव।
रमन्तां पुण्यालक्ष्मीर्याः पापीस्ता अनीनशम्।।"

अर्थात जैसे कोई अपनी गौशाला में आई हुई गायों की जांच करता है कि यह मेरी है या नहीं, उसी प्रकार मैं अपने पास आए धन का निरीक्षण करता हूं। जो पवित्र धन है, उसे मैं अपने पास रहने देता हूं किंतु जो पापयुक्त धन है उसे हटा देता हूं । अधर्म से अर्जित धन पतनकारी होता है, अतएव ऋग्वेद में ऋषि इंद्र से प्रार्थना करता है कि हे इंद्र, हमें श्रेष्ठ अर्थात ईमानदारी द्वारा अर्जित श्रेष्ठ शुद्ध धन दो।

"इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि देहि।"

इसी प्रकार - "अस्मासु भद्रा द्रविणानी दत्त" ।

प्रथम स्मृतिकार मनु ने तो आर्थिक शुद्धि को ही सबसे बड़ी शुद्धि घोषित करते हुए लिखा है -

"सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम्।
योऽर्थे शुचिः स हि शुचिः, न मृद्वारिशुचिः शुचिः।।"

अर्थात जितनी शुद्धताएं हैं उनमें आर्थिक शुद्धि सबसे बड़ी है । जो अर्थ के मामले में पवित्र है, वही पवित्र है, केवल मिट्टी और जल से अपने को शुद्ध कर लेने से कोई शुद्ध नहीं होता ।

महर्षि व्यास ने भी स्पष्ट किया है की धार्मिक पुरुष को क्रूर कर्मों द्वारा धनार्जन नहीं करना चाहिए-

" न धनार्थी नृशंसेन कर्मणा धनमर्जयेत्"।

तथा - " येऽर्था धर्मेण ते सत्याः, येऽधर्मेण धिगस्तु तान्"।।

आर्थिक भ्रष्टाचार की जड़ हैं लोभ, संग्रह एवं परिग्रह की प्रवृत्तियां । मानव की इन दुष्प्रवृत्तियों के निरोध एवं नियंत्रण के लिए उपनिषदों ने त्याग, असंग्रह एवं अपरिग्रह आदि सत्प्रवृत्तियों पर विशेष बल दिया है । ईशावास्योपनिषद का प्रथम मंत्र इस दिशा में बड़ा ही उपादेय है । यह मंत्र सर्वप्रथम समस्त ब्रह्मांड में 'ईश' अर्थात 'परमचेतन' की सत्ता को प्रथम पंक्ति में निरूपित कर द्वितीय पंक्ति में एक विधेयात्मक और दूसरा निषेधात्मक आदेश मानव समाज को देता है –

ईशावास्यमिदं सर्वं, यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः, मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ।।

अर्थात अखिल ब्रह्मांड में जो कुछ भी जड़–चेतन रूप जगत है, यह सब ईश्वर से व्याप्त है ।उस ईश्वर को साथ रखकर त्यागपूर्वक भोगते रहो । इसमें लोभ मत रखो, क्योंकि धन किसका है, अर्थात किसी का भी नहीं है। सर्वत्र एक दिव्य चेतना की उपस्थिति मनुष्य के मन को दो प्रकार से प्रभावित करती है। एक ओर तो वह मनुष्य को आत्मविश्वास तथा ऊर्जा से भर कर नकारात्मकता से बचाती है, तो दूसरी और आस्तिकता का वह भाव मन में भरती है कि मनुष्य स्वत: दुष्कर्म से या पाप से बचता है । इस संसार में रोगों का उपभोग आसक्ति छोड़कर त्याग पूर्वक करना चाहिए, यही विधेयात्मक उपदेश इस मंत्र का है।मंत्र के अंतिम चरण में ' मा गृधः कस्यस्विद् धनम् '–यह वाक्य एक निषेधात्मक आदेश मानव को प्रदान करता है । वस्तुत 'गृध्' धातु के अनेक अर्थ होते हैं, जैसे ग्रहण करना, लोभ करना, इच्छा करना, चाहना तथा लालच करना इत्यादि । यह मंत्र लोभ, लालच एवं आसक्ति का परित्याग कर त्याग पूर्वक लोगों को धर्मानुकूल मार्ग से उपभोग करने का निर्देश देता है । कतिपय विद्वान 'मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ' इस वाक्य का अर्थ करते हैं कि किसी के भी धन को पाने का लोभ मत करो । दूसरी ओर कुछ टीकाकार 'कस्यस्विद् धनम् 'इस अंश को पृथक कर इस पंक्ति का अर्थ करते हैं की–' धन किसका है? अर्थात् किसी का भी नहीं' लालच एवं लोभ के वशीभूत होकर अमर्यादित भोग करने की मानव की प्रवृत्ति ही आर्थिक भ्रष्टाचार को जन्म देती है ऐसी उपनिषदों की मान्यता है।

आर्थिक भ्रष्टाचार के निवारण हेतु उपनिषदों ने त्याग, दान, संग्रह एवं अपरिग्रह आदि सद्गुणों के विकास को विशेष महत्व प्रदान किया है। समाज के दीनों, दुखियों, पिछड़ों एवं सत्पात्रों को दान करने का उपदेश प्रत्येक स्नातक को देते हुए तैत्तिरीय उपनिषद में आचार्य कहते हैं –

श्रद्धया देयम् । श्रिया देयम् । ह्रिया देयम् । भिया देयम् । संविदा देयम्

वस्तुत: दीन–दुखियों, दरिद्रों एवं निर्धनों को दान देकर उनके कष्टों को दूर करने से तथा सबों के साथ मिलजुल कर बाँटकर भोगकरने या भोजन करने में जो असीम आनंद प्राप्त होता है वह वर्णनातीत है । दूसरी और दूसरों का धन हड़प कर असीम संपत्ति संग्रहित करने तथा अमर्याद एकांकी उपभोग करने वाला स्वार्थांग मनुष्य मानसिक शांति, सुख–चैन खोकर उस धन की सुरक्षा हेतु सतत चिंतित, भयभीत, अवसाद ग्रस्त एवं तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करने को बाध्य हो जाता है। इशोपनिषद की इसी मान्यता की संपुष्टि भगवान वेदव्यास ने इन शब्दों में की है –

"यावद् भ्रियेत जठरं,तावत् स्वत्वं हि देहिनाम् ।

अधिकं योऽभिमन्येत,स स्तेनो वधमर्हति ।।"श्रीमद्भागवत्

अपने परिश्रम द्वारा वैध उपायों से धर्म सम्मत मार्ग का अवलंबन कर मात्र शरीर यात्रा के निर्वाह हेतु अपेक्षित न्यूनतम धनसंग्रह पर बल देते हुए स्मृतिकार मनु ने भी कहा है

"यात्रा मात्र प्रसिध्यर्थं स्वैर्कर्मभिरगर्हितैः ।

अक्लेशेन शरीरस्य कुर्वीत धनसंचयम्" ।।[3]

नेहेतार्थान् प्रसङ्गेन,न विरूद्धेन कर्मणा ।

न विद्यमानेष्वर्थेषु नार्त्यामपि यतस्ततः ।।[4]

महर्षि कणाद की तरह धन संचय एवं परिग्रह को त्याग कर अन्न के कण-कण का चयन कर शरीर का भरण-पोषण करने वाला मनुष्य भला आर्थिक भ्रष्टाचार में कैसे लिप्त हो सकता है ? ऐसा ही उच्च आदर्श हमारे उपनिषदों ने समाज के समक्ष भ्रष्टाचार निवारण हेतु उपस्थित किए हैं

कठोपनिषद में बालक नचिकेता को समस्त सांसारिक सुखों, संपत्ति, धन, योग एवं ऐश्वर्य का प्रलोभन दिया परंतु उसने इन सारे भौतिक विनश्वर सुखों का परित्याग कर वास्तविक एवं अविनश्वर सुख-शांति एवं तुष्टि प्राप्ति हेतु आत्म तत्व का ज्ञान प्राप्त करने पर दृढ़ रहा । इसी प्रकार दूसरा दृष्टांत याज्ञवल्क्य एवं उनकी धर्मपत्नी मैत्रेयी का छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त होता है । अपनी धर्मपत्नी विदुषी मैत्रेयी को अपनी समस्त धन-संपत्ति प्रदान कर वन प्रस्थान करते समय महर्षि याज्ञवल्क्य से मैत्रेयी ने प्रश्न किया - क्या वह उस धन से अमर हो जाएगी? याज्ञवल्क्य ने इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, नहीं । चुकी विदुषी मैत्रेयी की रुचि धन-संपत्ति में न होकर आत्मज्ञान में थी अतः उसने याज्ञवल्क्य के इस प्रस्ताव को नकारते हुए कहा - जब मैं इस धन संपत्ति से अमरत्व नहीं पा सकती तब मैं यह सब लेकर क्या करूंगी? - 'येनाहं न अमृता स्याम तेनाहं किं कुर्याम्' । यदि समस्त मानव बालक नचिकेता एवं विदुषी मैत्रेयी के आदर्शों पर चलने का संकल्प ले तो आर्थिक भ्रष्टाचार क्या जड़-मूल से विनष्ट नहीं हो जाएगा??

आज के युग में जबकि प्रत्येक व्यक्ति, समाज,राष्ट्र एवं संपूर्ण विश्व में भ्रष्टाचार का साम्राज्य फैला हुआ है ईशोपनिषद् का निम्नलिखित अंतिम मंत्र बाद ही सटीक एवं प्रासंगिक है -

"हिरण्मयेन पात्रेण सत्यसापिहितमं मुखम् ।
तत्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये" ।।

वस्तुतः परम सत्य 'सत्य' का मुख स्वर्णपात्र से ढका रहता है । सोने के लोभ एवं लालच में ही तो समस्त प्रकार के आर्थिक भ्रष्टाचार, घोटाले, लूट-खसोट,चोरी, डकैती तथा घूसखोरी आदि किए जाते हैं तथा सत्य ढका रह जाता है । वास्तविकता तथा सत्य के साक्षात्कार हेतु सुवर्ण का लोभ मनुष्य को छोड़ना ही होगा । अतएव इस मंत्र में सत्य का दर्शन करने हेतु सुवर्णरूपी आवरण या पर्दे को हटाने की प्रार्थना ईश्वर से की गई है।

कठोपनिषद में 'श्रेय' एवं 'प्रेय' इन दो मार्गों का वर्णन किया गया है । इनमें 'प्रेय' मार्ग सांसारिक धन- संपत्ति, वैभव, ऐश्वर्य, भोग प्रदान करने वाला है तो दूसरी ओर 'श्रेय' मार्ग आध्यात्मिक, परमार्थिक, सुख-शांति एवं मोक्ष की ओर ले जाने वाला माना गया है । इन मार्गों में प्रथम 'प्रेय' मार्ग 'अभिधा' के नाम से प्रसिद्ध है तथा मनुष्य को अवनति पतन की ओर ले जाता है । दूसरी ओर 'श्रेय' मार्ग 'विद्या' नाम से जाना जाता है तथा इस पर चलने वाला मनुष्य कल्याण मार्ग पर चलकर परम पुरुषार्थ मोक्ष को प्राप्त करने का अधिकारी होता है -

अन्यच्छ्रेयोऽन्यदुतैव प्रेयः
ते उभेनानार्थे पुरुषंसिनीतः ।
तयोः श्रेय आददानस्य साधुः
भवति हीयतेऽर्थाद् य उ प्रेयो वृणीते ।। (1.2.1)
दूरमेते विपरीते विषूची
अविद्या या च विद्येति जाता ।
विदयाभीप्सिनं नाचिकेतस्त्वां मन्ये
न तवा कामा बहवोऽलोलुम्पन्त ।। (1.2-4-5)

इन मंत्रो में कठोपनिषद का स्पष्ट संदेश है कि भौतिक, सांसारिक सुखों, धन-संपत्तियों का लोभ एवं लालच छोड़कर आध्यात्मिक समृद्धि की कामना प्रत्येक मानव को करनी चाहिए । यदि उपनिषदों द्वारा निरूपित इस 'श्रेय मार्ग' पर मनुष्य चलने लगे

तो समस्त विश्व में न केवल आर्थिक अपितु सभी प्रकार के भ्रष्टाचारों का उन्मूलन कर सुख, समृद्धि एवं शांति का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा । इस प्रकार 'यत्र विश्वं भवत्येक नीडम्' –का स्वप्न चरितार्थ हो सकेगा ।

सन्दर्भ-

1.कण्ठ 1.1.27
2.बृहदारण्यक 4.5.3.
3.मनु 4.3
4. मनु 4.15
5. कठोपनिषद–1.2.1
6.कठोपनिषद–1.2-4-5